भूमिका

बचपन के दिनों में रविवार के दिन का बड़ा बेसब्री से इंतजार रहता था। कारण स्कूल से मिली छुट्टी नहीं बल्कि उन दिनों दूरदर्शन पर दिखलाए जाने वाले धारावाहिकों के अगले एपिसोड जानने की उत्सुकता रहती थी। तब आज की तरह डिश टीवी और डी.टी.एच. का ज़माना नहीं था। न ही इतने सारे चैनल ही हुआ करते थे। तब केबल का कनेक्शन लेना पड़ता था, दूरदर्शन के अलावा चैनल देखने की लिए। और मेरे लिए तो दूरदर्शन के ही दर्शन हो जाए वही बड़ी बात थी। हफ्ते में केवल संडे को छूट मिलती थी, बाकी दिनों में टीवी देखने पर घर में कर्फ़्यू सा लगा रहता था। ज्यों ही पिताजी घर से बाहर कहीं निकले तो उस समय को ज़ाया न करते हुए झटपट बैठ जाते थे, टीवी के सामने। तब रविवार को फिल्मी गीतों का एक कार्यक्रम रंगोली आता था। जिसे मैं कभी मिस नहीं करता था। उसमें दिखलाए जाने वाले गीतों में मुझे गुलज़ार के गीत बहुत पसंद आते थे। तब मुझे इतना पता नहीं था कि ये सारे गीत गुलज़ार के ही लिखे हैं। कुछ समय बाद जब दसवीं के बोर्ड के इग्ज़ाम सर पर आए तो टीवी से संडे को मुलाकात पर भी पाबंदी लग गई। फिर गाने सुनने की आदत जो मुझे रंगोली से लग गई थी, वो इतनी जल्दी कहाँ जाने वाली थी ? तब उन दिनों मैंने कुछ पैसे बचाकर एक छोटा सा रेडियो खरीदा, क्योंकि तब आज की तरह इतने एफ.एम. चैनल्स भी तो नहीं हुआ करते थे। जिसे शुरुआती दिनों में घर में पता ही नहीं लगने दिया। उस पर विविध भारती पर चोरी-छिपे सुबह-शाम, पढ़ते-लिखते खूब गाने सुना करता था। यहीं से मेरी जान-पहचान गुलज़ार से होनी शुरू हुई। रेडियो पर जब भी फरमाईशी गीतों का कोई भी प्रोग्राम आता तो उसमें फिल्म के नाम के साथ-साथ संगीतकार और गीतकार का भी नाम आता था। इस तरह से समय गुजरता गया और मेरी गुलज़ार के प्रति निकटता बढ़ती ही चली गई। धीरे-धीरे ही सही पता नहीं कब मैं गुलज़ार के गीतों को इतना सुनने और पसंद करने लगा की, दिल में एक तमन्ना हुई की क्यों न गुलज़ार के फिल्मों पर ही कुछ काम किया जाए। 'साहित्यिक कृतियों पर आधारित गुलज़ार की फिल्में' (विशेष संदर्भ : 'आंधी', 'मौसम', 'खुशबू', 'इजाज़त'), एम.फिल. का यह लघु शोध प्रबंध उसी दिल में छिपी एक कसक का परिणाम है।

साहित्य और सिनेमा दोनों ही ऐसे माध्यम हैं जो अपने परिवेश, समाज और विचारधारा को व्यक्त करने में सबसे अधिक सक्षम है। इन दोनों विधाओं ने ही समाज को हमेशा से ही नवीन विचारो और प्रवृत्तियों से जोड़ा है। साहित्य और सिनेमा का संबंध देखें तो सिनेमा अपने आरम्भ से ही साहित्य का ऋणी रहा है। साहित्य की विभिन्न विधाओं को अपने में समाहित किए हुए एक साथ प्रस्तुत कर सिनेमा ने अपनी प्रभावशाली उपस्थिति और महत्ता को दर्शाया है। कविता, कहानी,

उपन्यास, एकांकी और नाटक आदि को सजीव रूप से अभिव्यक्त करने के लिए सिनेमा सशक्त माध्यम रहा है। आज शायद ही समाज का कोई ऐसा क्षेत्र हो जो सिनेमा से प्रभावित न हुआ हो। इतना ही नहीं साहित्य की शक्ति को सिनेमा सरलता से उन जनमानस तक पहुंचाने में भी मदद करता है जो पढ़ना लिखना नहीं जानते । सिनेमा की ताकत ही यही है कि वह बिना शर्त एक बार में ही लाखों तक पहुंचने में सक्षम है । सिनेमा की पहुंच वहां तक है जहां साहित्य दुर्लभ है। 500 रूपए के किसी उपन्यास पर जब 50 करोड़ की फिल्म बनती है तो वह तीस रूपए की सीडी में रूपांतरित होकर उनसे भी संवाद करती है जो साहित्य का मर्म नहीं समझते हैं।

सत्तर का दशक हिंदी सिनेमा और भारतीय समाज के लिए बहुत महत्वपूर्ण है। इस दशक के बाद जो सामाजिक और राजनीतिक परिवर्तन हुआ भारतीय जनमानस और हिंदी सिनेमा पर काफी गहरा असर पड़ा। यह वही समय था जब अमिताभ अपने एंग्री यंग मैन की छवि के जरिए युवाओं पर अपनी गहरी छाप छोड़ रहे थे। बॉबी जैसी फिल्में युवाओं को लुभाने में लगी हुई थी। भारतीय युवा तब उन्मुक्त प्रेम और हिंसात्मक फिल्मों की तरफ आकर्षित हो रहा था। ऐसे समय में गुलज़ार जैसे भावनात्मक कवि व लेखक का सिनेमा में आना उनके लिए कई तरह की चुनौतियों से भरा था। पर गुलज़ार के पास एक ताकत थी, वह थी साहित्य और भाषा की समझ।जिसने न केवल एक साहित्यकार के रूप में अपनी रचनाओं के माध्यम से भावुकता और संवेदनाओं का मर्मस्पर्शी चित्रण किया वरन् हिन्दी सिनेमा में एक सफल फिल्मकार, गीतकार व संवाद लेखक के रूप में ऐसे मुकाम पर पहुंचा दिया है, जहां आज किसी का पहुंचना चुनौतीपूर्ण है। सत्तर के दशक से आज तक गुलज़ार ऐसे व्यक्तित्व के रूप में उभरकर हमारे सामने आते हैं जिन्होंने व्यवसायिकता से भरे इस फिल्मी दुनिया में साहित्य की मशाल जलाए हुए है । इसी बात की पुष्टि करता हुआ कमलेश्वर के उपन्यास 'काली आंधी' पर उन्हीं के द्वारा निर्देशित फिल्म 'आंधी' का यह गीत द्रष्टव्य है□

"इस मोड़ से जाते हैं"...

प्रस्तुत शोध का विषय "साहित्यिक कृतियों पर आधारित गुलज़ार की फिल्में' (विशेष संदर्भ : 'आंधी', 'मौसम', 'ख़ुशबू', 'इजाज़त') है। 'खुशबू', शरत चंद्र के उपन्यास पंडित मोशाय पर, फिल्म 'आंधी' और 'मौसम' कमलेश्वर के उपन्यास क्रमशः 'काली आंधी' और 'आगामी अतीत' पर, और 'इजाज़त' बंगाली लेखक सुबोध घोष की कहानी 'जतु गृह' पर बनीं है। अपने शोध से संबंधित सामग्री के संचयन के लिए सबसे पहले मैं पुणे स्थित भारतीय फिल्म और टेलीविज़न संस्थान (FTII), राष्ट्रीय फिल्म संग्रहालय (NFAI) गया। जहाँ FTII से ज्यादा कुछ हासिल नहीं हुआ, मगर NFAI से मुझे गुलज़ार के फिल्मों की तत्कालीन समीक्षाओं के पेपर की कुछ कटिंग्स मिली। फिर मैं

दिल्ली गया। जहां साहित्य अकादमी में मुझे मेघना गुलज़ार द्वारा बनीं एक सी.डी. प्राप्त हुई जो कि गुलज़ार पर केन्द्रित थी। फिर यहां दरियागंज, नई सड़क, और अंसारी रोड से संबंधित पुस्तकों को खरीदा। में इसके बाद मैं 'सिनेमा और साहित्य का अंतर्संबंध' पर एक सेमिनार में भाग लेने गोयनका कॉलेज ऑफ कामर्स एंड बिजनेस एडमिनिस्ट्रेशन, कोलकाता गया। जहां पर मैंने विषय से संबंधित बहुत सी बातों को जाना। अब तक मेरे पास शोध से संबंधित लगभग सभी सामग्रियों का संचयन तो लगभग-लगभग हो गया था। किंतु सुबोध घोष की 'जतु-गृह' कहानी का हिंदी अनुवाद अब भी मुझे इतनी भागदौड़ करने के बावजूद भी प्राप्त नहीं हुई। जिस पर इजाज़त फिल्म बनीं थी। फिर इसी की तलाश में अंत में मैं कोलकाता में ही स्थित नेशनल लाइब्रेरी गया। मगर वहां भी मुझे निराशा ही हाथ लगी। फिर शोध से संबंधित सभी सामग्रियों के संग्रहण के बाद अपने शोध-निर्देशक प्रो. सुरेश शर्मा सर के कुशल मार्गदर्शन में मैंने अपना शोध कार्य शुरू किया। अपने शोध कार्य में मैंने विश्लेष्णात्मक विधि का प्रयोग किया है। साहित्यिक रचनाओं पर बनीं इन सभी फिल्मों का एक-एक कर विविध पहलूओं व साहित्य और सिनेमा के मापदंडो से इनका भली-भांति विश्लेषण करने का प्रयास किया है।

शोध को मूल रूप से तीन अध्यायों में बांटा गया है। पहले अध्याय का नाम गुलज़ार : एक परिचय है। दूसरे अध्याय का नाम : साहित्य, सिनेमा और गुलज़ार है। तीसरे अध्याय का नाम : साहित्यिक कृतियों पर आधारित गुलज़ार की फिल्में हैं। पहले अध्याय में गुलज़ार का संक्षिप्त परिचय है। जिसमें उनके जन्म, बचपन और पारिवारिक जीवन के बारे में बताया गया ही। दूसरे में साहित्य, सिनेमा और गुलज़ार को लेकर उनके आपसी सम्बन्धों पर चर्चा की गई है। और अंत में तीसरे अध्याय में इन सभी फिल्मों को साहित्य और सिनेमा के पैमानों पर विश्लेषित किया गया है। साथ ही गुलज़ार के फिल्म कला पर भी बात की गई है। गुलज़ार की ये सारी फिल्में साहित्यिक परिवेश की तो हैं हीं साथ ही इन सभी फिल्मों में रिश्तों की महीन बारीकियों को भी बड़े बेहतरीन तरीके से समझाया गया है।

प्रस्तुत लघु शोध प्रबंध मैंने प्रो. सुरेश शर्मा सर, विभागाध्यक्ष, प्रदर्शनकारी कला (फिल्म और नाटक) विभाग, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) के कुशल निर्देशन में सम्पन्न किया है। इसके साथ-साथ मैं विभाग के समस्त शिक्षकों, कर्मचारियों और अपने सहपाठियों को धन्यवाद देना चाहूँगा कि उन्होंने आवश्यकता पड़ने पर मेरा सहयोग किया। इसके अलावा विशेष रूप से मैं अपनी प्रिय मित्र साधना का तहे दिल से शुक्रिया अदा करना चाहूँगा, जिसने मेरे पुस्तकों के संग्रहण व उनके खरीद में काफी भागदौड़ की। साथ ही अपने हंसराज कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय के सभी शिक्षकों रमा मेम, प्रभात सर, नृत्यगोपाल सर, सुधांशु सर, सुनील सर, सीनियर विजय सर,

और मित्रों अनुज, महेंद्र, मंगल आदि सबका आभारी हूँ, जिसने मुझे हमेशा से ही प्रोत्साहित किया। और अंत में मैं सबसे अधिक अपने परिवार के सभी सदस्यों का आभार व्यक्त करना चाहूँगा। विशेष रूप से मम्मी-डैडी का जो घर से इतनी दूर होते हुए भी कभी दूरी का एहसास नहीं होने दिया और पल-पल मेरा उत्साहवर्धन किया।

– आशुतोष श्रीवास्तव